संस्करण - 4 अंक - 4 अक्टूबर 2024

प्रज्ञाम्बु

cGanga
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर द्वारा संचालित गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga) की इस त्रैमासिक पत्रिका का उद्देश्य जल और नदी पुनरुद्धार एवं संरक्षण के प्रबंधन से संबंधित विभिन्न विषयों पर देश-विदेश से उपलब्ध पारंपरिक ज्ञान एवं विज्ञान के समन्वय पर आधारित जानकारी संबंधित संस्थाओं एवं नागरिकों तक पहुचाना है।

जलसंसाधनों की निर्मलता और मृदा संरक्षण में एसटीपी स्लज प्रबंधन का महत्व

नदियों की पुनर्बहाली के लिए शहरी अपशिष्ट जल का समुचित तरीके से निदान होना जरूरी है। सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट में जब शहरी घरेलू अपशिष्ट जल का उपचार किया जाता है तो उपचारित जल की निकासी के बाद कीचड़नुमा अर्धतरल अपशिष्ट पदार्थ ट्रीटमेंट प्लांट में शेष रह जाता है। दरअसल इस कीचड़नुमा अपशिष्ट में वह अशुद्धियां होती हैं, जिन्हें अपशिष्ट जल से पृथक किया गया है। कुछ अपशिष्ट जल उपचार केंद्रों पर अशुद्धियों में मौजूद कार्बनिक पदार्थ से निर्मित ठोस अवयव शेष रह जाते हैं, जिन्हें बायोसॉलिड्स कहते हैं।अपशिष्ट जल के उपचार के बाद इन अशुद्धियों का सही तरह से निदान करना उतना ही आवश्यक है, जितना जरूरी है अपशिष्ट जल का उपचार। यदि इस पदार्थ को अनुपचारित रहने दिया गया तो येन–केन प्रकारेण यह अशुद्धियां दोबारा पर्यावरण और जलस्रोतों तक पहुंच जाती है। इन अशुद्धियों को एसटीपी स्लज भी कहा जाता है। प्रज्ञाम्बु का यह अंक इन्हीं अशुद्धियों के निस्तारण से जुड़े विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालेगा। इसके साथ ही हम चर्चा करेंगे कि किस तरह एसटीपी स्लज के समुचित निस्तारण और प्रबंधन से जलस्रोतों के संरक्षण के साथ–साथ मृदा संरक्षण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है।

आगे के पृष्ठों पर हम इन अशुद्धियों को एसटीपी स्लज और बायोसॉलिड्स के नाम से संबोधित करेंगे। दरअसल कीचड़ और जैव ठोस अवयव इन दोनों शब्दों का इस्तेमाल अन्य संदर्भों में भी होता है, यहां हम विशेष अशुद्धियों के बारे में चर्चा कर रहे हैं लिहाजा प्रज्ञाम्बु के हिंदी संस्करण में दो अंग्रेजी शब्दों का इस्तेमाल किया जा रहा है।

भारत में विगत वर्षों में शहरीकरण तेजी से बढ़ा है। जिसके चलते शहरी घरेलू अपशिष्ट के निदान के लिए सुविधाएं जुटाने की मांग भी बढ़ी है। सिर्फ नमामि गंगे कार्यक्रम के अंतर्गत ही 2015 से 2021 के बीच छह वर्षों में देशभर में 800 से अधिक एसटीपी (सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट्स) का निर्माण और संचालन प्रारंभ हुआ। अन्य परियोजनाओं या अभियानों के अंतर्गत निर्मित प्लांट्स को यदि इस गणना में शामिल किया जाए तो संभव है कि असल संख्या अधिक हो। एसटीपी की संख्या बढ़ने से स्वभाविक रूप से एसटीपी से निकलने वाली स्लज की मात्रा में भी वृद्धि होगी। पर्यावरण क्षेत्र की पत्रिका डाउन टू अर्थ में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार देश में 1,460 एसटीपी प्रतिदिन 104,210 टन स्लज पैदा कर रहे हैं। हमारे यहां एसटीपी से निकलने वाली स्लज का निस्तारण स्थानीय प्रशासन के विवेक के अनुसार होता है क्योंकि इस संबंध में स्पष्ट और एकीकृत दिशा–निर्देशों और मानदंड़ों का अभाव है। समय की मांग को देखते हुए यह आवश्यक है कि एसटीपी स्लज के संग्रहण, परिवहन, उपचार, उपयोग, निदान और निस्तारण के संबंध में नियम तय किये जाएँ। जो भारत की भौगोलिक और पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुकूल हो।

पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता बढ़ने के साथ ही इस क्षेत्र में सरकारी और निजी निवेश बढ़ा है। साथ ही इस क्षेत्र को व्यवसायिक लाभ कमाने की दृष्टि से देखते हुए अपशिष्ट पदार्थों में भी अवसरों की खोज की जा रही है। ऐसे में एसटीपी स्लज को लेकर भी कई तरह के दावे देखने और सुनने में आ रहे हैं। मसलन निजी क्षेत्र की कुछ कंपनिया दावा कर रही हैं कि एसटीपी स्लज से ऊर्जा का उत्पादन किया जा सकता है। इसी तरह एसटीपी स्लज से जैविक ईंट, बायोगैस और जैविक उर्वरक बनाने की सलाह भी कई निजी और स्वयंसेवी संगठनों के द्वारा केंद्र और राज्य सरकारों को दी जा रही है। प्रज्ञाम्बु के इस अंक में हम इन दावों की पड़ताल करेंगे और यह समझने की कोशिश करेंगे कि पर्यावरण के लिहाज से किन विधियों से एसटीपी स्लज का निदान करना उचित है? और वे कौन–से सह–उत्पाद हैं, जिन्हें बनाने में एसटीपी स्लज का इस्तेमाल किया जा सकता है?

अमेरिका समेत कुछ अन्य विकसित देशों ने एसटीपी स्लज के निदान के बाद, शेष रह गए कार्बनिक पदार्थ की गुणवत्ता के अनुसार उसे दो वर्गों में वर्गीकृत किया है, वर्ग ए और वर्ग बी। वर्ग ए में प्राप्त धूलनुमा कार्बनिक पदार्थ (बायोसॉलिडस) पूर्णतया सूक्ष्मजीवों से मुक्त होते हैं, अतरू इन्हें खाद या लैंडफील के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। वर्ग बी में कुछ सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति की संभावना होती हैं, लिहाजा वर्ग बी के अंतर्गत प्राप्त निस्तारित कार्बनिक पदार्थ को इस्तेमाल करने के पृथक निर्देश होते हैं। भारत में इस तरह का वर्गीकरण नहीं हैं। कई विशेषज्ञों का मानना है कि एसटीपी से प्राप्त स्लज में कार्बनिक पदार्थों की मौजूदगी की वजह से इसका इस्तेमाल कृषि उर्वरक के रूप में किया जाना चाहिए। दूसरी ओर भारत में उर्वरकों के संबंध में बनाए गए नीति नियमों में नाईट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम की तय मात्रा होना आवश्यक हैं। एसटीपी स्लज के उपचार के बाद प्राप्त शुष्क पदार्थ इन मानदंडों को पूर्ण करे यह आवश्यक नहीं। दरअसल इस ठोस अपशिष्ट में कार्बन की मात्रा अधिक और नाईट्रोजन और फॉस्फोरस की मात्रा तय मानकों से कम हो सकती है। ऐसे में एसटीपी स्लज के उपचार के बाद प्राप्त बायोसॉलिड्स का श्रेष्ठ पुनरुपयोग हो सकता है, मृदा की ऊपरी पर्त के पोषण

सहायक के रूप में। उपचार के बाद प्राप्त एसटीपी स्लज में नाईट्रोजन और फॉस्फोरस का अनुपात कम हो सकता हैं किंतु सामान्यतः इसमें कार्बन की प्रचुर मात्रा पाई जाती है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार तो भारतीय मृदा में कार्बन का प्रतिशत लगातार घट रहा है। ऐसे में उपचार के बाद एसटीपी स्लज की मिट्टी में वापसी अर्थात मिट्टी में कार्बन की पुनर्बहाली। मिट्टी में कार्बन की मात्रा बढ़ने से मिट्टी में सूक्ष्मजैविक गतिविधियां बढ़ेंगी, सूक्ष्मजैविक गतिविधियां बढ़ने से सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले नाईट्रोजन स्थिरीकरण की दर बढ़ेगी, जिससे मिट्टी की उर्वरकता बढ़ेगी। मिट्टी में उपस्थित कार्बन मिट्टी के सूक्ष्मजीवों की वृद्धि के लिए ऊर्जा का संसाधन है। इंडियन काउंसिल ऑफ एग्रीकल्चर रिसर्च के अनुसार भारतीय कृषि भूमि की मृदा में कार्बन का प्रतिशत अत्यंत कम है। सामान्यतरू मृदा में कार्बन का प्रतिशत 1–1.5 होना चाहिए, जो हमारी मृदा में 0.3–0.4 प्रतिशत है। एसटीपी से निकला अपशिष्ट मिट्टी में कार्बन की मात्रा बढ़ाने का श्रेष्ठ विकल्प साबित हो सकता है। प्रज्ञाम्बु के पिछले अंक में हमने एसटीपी के विकेंद्रीकरण का समर्थन किया था। यदि अपशिष्ट जल निवारण की व्यवस्था का विकेंद्रीकरण किया जाता है तो स्वभाविक है कि एसटीपी की संख्या में भी इजाफा होगा। ऐसे में हमें इन एसटीपी से निकलने वाले स्लज के निदान के बारे में भी सोचना होगा। जिसमें सबसे बड़ी बाधा हैं, स्लज के समुचित प्रबंधन की विधियों के संबंध में दिशा–निर्देश और नियमों का अभाव। जिसके चलते शहरों के स्थानीय प्रशासन को कई बिंदुओं पर मार्गदर्शन नहीं मिल रहा है। ऐसे कई पहलू हैं, जिन पर स्पष्ट दिशा–निर्देश होना आवश्यक है, जैसे एसटीपी में अपशिष्ट जल के उपचार के बाद बचे हुए कीचड़ का संग्रहण, परिवहन और निदान कैसे हो? स्लज में मौजूद पैथोजन (बीमारी फैलाने वाले सूक्ष्मजीव) की सीमा कैसे तय की जाए और क्या हो? स्लज प्रबंधन की निगरानी की व्यवस्था कैसे की जाए? यदि स्लज प्रबंधन के दौरान अपशिष्ट जल या स्लज में भारी धातुओं की उपस्थिति की सूचना मिलती है तो इसकी सूचना कहां दी जाए? किन एजेंसियों के पास इसकी जांच और आगे की कार्यवाही के अधिकार होंगे?

गौरतलब है, कि एसटीपी से निकलने वाले उपचारित जल के संबंध में स्पष्ट मानदंड है, इस संबंध में ग्रीन ट्रिब्यूनल और सर्वोच्च न्यायालय तक का मार्गदर्शन उपलब्ध है। हम यहां उपचारित जल के बारे में नहीं अपितु जल के उपचार के बाद शेष बचे ठोस अवयवों बायोसॉलिड्स की गुणवत्ता के संबंध में नियमों की कमी का उल्लेख कर रहे हैं।

बायोसॉलिड्स के संबंध में नियमों के अभाव में दिल्ली, मुंबई, अहमदाबाद और चंड़ीगढ़ के स्थानीय प्रशासन ने अमेरिका के मानदंड़ों को अपनाते हुए इस दिशा में काम करना प्रारंभ कर दिया है। हमारा मकसद यहां अमेरिकी मानदंड़ों की समीक्षा करना नहीं है वरन् इस ओर ध्यान आकर्षित करना है कि भारत और अमेरिका की भौगोलिक परिस्थितियां भिन्न है। इतना ही नहीं, दोनों देशों की आर्थिक परिस्थितियों का अंतर भी जगजाहिर है। इन्हीं परिस्थितियों को देखते हुए हमें समूची प्रक्रिया के प्रबंधन और नियमन को भारतीय प्राथमिकताओं के आधार पर निर्धारित करना चाहिए।

इसी संदर्भ में आईआईटी रूड़की द्वारा किये गए एक अध्ययन के नतीजे उल्लेखनीय है, इस अध्ययन के अनुसार स्लज की डीवॉटरिंग (नमी का उत्सर्जन) के बाद वैश्विक स्तर पर बी श्रेणी में श्रेणीबद्ध किये गए ठोस अपशिष्ट की प्राप्ति संभव है। इस अपशिष्ट का प्रयोग मृदा पोषण संवर्धक के रूप में ऐसी फसलों पर किया जा सकता है, जिनसे प्राप्त कृषि उत्पादों को कच्चे रूप में नहीं खाया जाता। इसी अध्ययन में एक तर्क यह भी प्रस्तुत किया गया कि भारत की उष्ण जलवायु में बी श्रेणी प्राप्त अपशिष्ट में कीटाणुओं के बचने की संभावना न्यूनतम हो जाती है। हमारी सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों के अनुसार देखा जाए तो भारत में स्लज के प्रबंधन के लिए कम खर्चीली, पर्यावरण हितैषी और सुस्थिर विधियों को अपनाना होगा। आईए एक नजर डालते हैं स्लज प्रबंधन की लोकप्रिय विधियों पर–

सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट में स्लज निस्तारण से पूर्व उसे गाढ़ा किया जाता है, स्थिर होने दिया जाता है और डी–वॉटरिंग अर्थात उसका पानी पृथक किया जाता है। यह तीनों प्रक्रियाएं अलग–अलग विधियों से पूर्ण की जा सकती है। डी–वॉटरिंग के लिए यदि विद्युत ऊर्जा का उपयोग किया जाए तो इसमें ऊर्जा की बहुत अधिक आवश्यकता होगी। हमारी सामाजिक आर्थिक परिस्थितयों के अनुसार विचार करें तो विद्युत ऊर्जा एक महंगा संसाधन हैं,इस काम में विद्युत ऊर्जा का उपयोग करने से इस संसाधन पर अतिरिक्त भार बढ़ेगा। भारत जैसे गर्म देश में सौर ऊर्जा की मदद से स्लज की डीवॉटरिंग संभव है लेकिन इसके लिए पर्याप्त वेंटिलेशन वाले स्थान की आवश्यकता होगी, जहां स्लज का संग्रहण हो सके और सौर ऊर्जा या सूरज के प्राकृतिक प्रकाश और गर्माहट की मदद से स्लज की डीवॉटरिंग हो। इसी क्रम में दूसरी चुनौती है– स्लज से पैदा होने वाली दुर्गंध की। स्लज में लाईम यानी चूना मिलाकर काफी हद तक दुर्गंध की समस्या पर नियंत्रण पाया जा सकता है। यदि स्लज प्रबंधन की लागत को कम करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों जैसे सूरज के प्रकाश का इस्तेमाल करना है तो हमें ऐसे रचनात्मक समाधान खोजने होंगे, जो दुर्गंध की समस्या का निदान कर सके। हमें इस क्षेत्र में शोध को बढ़ावा देना होगा और नवीन विधियों का परीक्षण भी।

कई स्थानों पर स्लज को सुखाने से पहले इसका अवायवीय अर्थात् हवा की अनुपस्थिति में (एनएरोबिक) डायजेशन किया जाता है और एनएरोबिक डायजेशन से उत्पन्न बायोगैस का इस्तेमाल स्लज को सुखाने के लिए इस्तेमाल किये जा रहे ड्रायर को गर्म करने में किया जाता है। स्लज से नमी के उत्सर्जन के बाद इसके निस्तारण के लिए पायरोलिसिस, गैसीफिकेशन और भस्मीकरण जैसी विधियों को अपनाया जाता है। पायरोलिसिस की प्रक्रिया भी अलग–अलग विधियों से पूर्ण होती है। कार्बनिक पदार्थों के पायरोलिसिस से गैस और तेल उत्पन्न होते हैं और कार्बनिक ठोस पदार्थ प्राप्त होता है, जिसे श्चारश कहते हैं। यह श्चारश उर्वरक ना सही किंतु मृदा का पोषण संवर्धक साबित हो सकता है।

दुनिया के विभिन्न देशों ने स्लज प्रबंधन के लिए कई नियम बनाए हैं उदाहरण के तौर पर अमेरिका, ब्रिटेन और दक्षिण अफ्रीका ने स्लज को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है। जिन्हें बायोसॉलिड्स का नाम दिया गया है। दूसरी ओर नार्वे ने उपचारित स्लज से प्राप्त बायोसॉलिड्स को एक ही श्रेणी में स्वीकृति दी। नार्वे में हानिकारक सूक्ष्मजीवों के पूर्ण खात्मे के बाद ही इन बायोसॉलिड्स को लैंडफील या कृषि क्षेत्र में उपयोग किया जा सकता है। जिन देशों ने बायोसॉलिड्स को तीन श्रेणियों में विभाजित किया, वहां ए वर्ग या पूर्णतरू कीटाणु रहित बायोसॉलिड्स का इस्तेमाल कृषि क्षेत्र में किया जाता है। वर्ग बी के अंतर्गत आ रहे बायोसॉलिड्स का इस्तेमाल सड़क निर्माण जैसे कार्य में और सी वर्ग के स्लज का इस्तेमाल भस्मक में जलाने के लिए किया जा सकता है।

भारत के संदर्भ में जब हम स्लज प्रबंधन को देखते हैं तो एक और महत्वपूर्ण पहलू दिखाई देता है– वह है स्लज में पलने वाले बीमारी के वाहकों की रोकथाम। यदि सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट में स्लज का संग्रहण होगा तो मच्छर, मक्खी, कीट–पतंगे के बढ़ने की संभावनाएं भी बढ़ेगी। किसी ट्रीटमेंट प्लांट के निर्माण और संचालन से पूर्व ही इस चुनौती को हल करने की रणनीति बनानी होगी। इस समस्या से निदान के लिए बहुत आवश्यक है कि प्लांट में नमीयुक्त ठोस अपशिष्ट को संग्रहित करके रखने की अवधि कम हो।

इसके साथ ही नगरीय निकायों को यह भी ख्याल रखना होगा कि सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट और स्लज ट्रीटमेंट प्लांट के बीच में दूरी कम (50 किमी से कम) हो। अपशिष्ट उपचार के यह दो केंद्र या तो एक–दूसरे से जुड़े हो और यदि स्थान के अभाव में ऐसा संभव ना हो तो किसी तय दूरी की सीमा में ही स्लज ट्रीटमेंट

प्लांट बनाया जाना चाहिए ताकि स्लज के परिवहन में समय और ऊर्जा की ज्यादा खपत ना हो। इसके साथ ही प्रत्येक नगरिय निकाय को यह सर्वे करना चाहिए कि उनके अधिकार क्षेत्र में प्रतिदिन और प्रतिमाह कितने सीवेज स्लज का उत्पादन हो रहा है? किन शुद्धिकरण संयंत्रों से आ रहे सीवेज स्लज में भारी धातुओं के प्रदूषण की मौजूदगी के प्रमाण मिले हैं? वही दूसरी ओर किसी नियंत्रण संस्था (उदारहनार्थ राज्यों के प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड) को सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट और स्लज ट्रीटमेंट प्लांट के लिए पृथक से अनुमति, अनुशंसा, निगरानी और जांच का उत्तरदायित्व निभाना होगा।

इसी के साथ नगरीय निकायों को यह सर्वेक्षण भी करना होगा कि उपचारित स्लज बायोसॉलिड्स के उपभोक्ता कौन और कहां हैं? बॉयोसॉलिड्स को अपनाने के लिए कृषक समुदाय तैयार है? संबंधित नगरीय क्षेत्र में स्लज के अंतिम निस्तारण का सबसे किफायती तरीका क्या है? भूमि में भराव (लैंडफिल), बॉयोसॉलिड्स के रूप में कृषि और उद्यानिकी में उपयोग या बायोगैस का उत्पादन? नगर में स्थित एसटीपी में क्या इतनी भूमि और अधोसंरचना और क्षमता है कि वहीं पर स्लज का संग्रहण और अवायवीय डायजेशन संभव हो सके? इन सभी पहलूओं पर जमीनी सर्वेक्षण के बाद प्रत्येक नगरीय निकाय को सीवेज स्लज ट्रीटमेंट में आने वाले वार्षिक खर्च की गणना करते हुए स्लज ट्रीटमेंट योजना बनानी होगी।

इस योजना में यह स्पष्ट होना चाहिए कि नगरीय निकाय स्लज से किस संसाधन को पुनः प्राप्त करना चाहता है? यह संसाधन मृदा पोषक सहायक (सॉइल इनहेनसर बॉयोसॉलिड्स), बायोगैस, पानी या फिर थर्मल पॉवर प्लांट में दहन करने के लिए बॉयोमॉस हो सकते हैं। अंतिम उत्पाद के संबंध में स्पष्टता होने के बाद नगरीय निकाय इस प्लांट को स्थापित करने के लिए वित्तीय प्रारूप पर काम कर सकता है।

संभावित रुकावटें

स्लज ट्रीटमेंट प्लांट के निर्माण और संचालन में किसी नगरीय निकाय के समक्ष आने वाली संभावित रुकावटें इस प्रकार है–

1. प्लांट के निर्माण और संचालन के लिए व्यावसायिक मॉडल के निर्धारण में आने वाली चुनौतियां
2. निर्माण से पूर्व वित्तीय सहायता संबंधी रूकावटें
3. अंतिम उत्पाद के प्रति अस्पष्टता
4. पीपीपी मॉडल में निजी क्षेत्र की रूचि बढ़ाना

कैसे होगा समाधान

इन रूकावटों का समाधान संभव हैं, सबसे पहले नगरीय निकाय को स्लज और सीवेज के संबंध में वर्तमान समय के विशुद्ध आंकड़े जुटाने होंगे। इन आंकड़ों के आधार पर यह तय किया जा सकता है कि उक्त नगर में इस स्लज से क्या अंतिम उत्पाद प्राप्त किया जाना चाहिए। इसी आधार पर एक योजना बनाकर स्लज ट्रीटमेंट प्लांट के निर्माण के लिए केंद्र या राज्य सरकार से सहायता की मांग की जा सकती है अथवा दोनों सरकारों की संयुक्त भागीदारी से भी स्लज ट्रीटमेंट की शुरूआत की जा सकती है। यही नही, अंतिम उत्पाद को लेकर जब पूर्ण स्पष्टता हो तो इस क्षेत्र में निजी भागीदारी भी आमंत्रित की जा सकती है। यही नही, उपार्जित कार्बन क्रेडिट का विक्रय भी स्लज ट्रीटमेंट के जरिए संभव हो सकता है। इसके अलावा तकनीकी शैक्षणिक संस्थाओं से सुझाव लेकर प्लांट के संचालन में आने वाले खर्च को कम करने के रचनात्मक तरीकों की खोज की जा सकती है। उदाहरण के तौर पर स्लज के एनएरोबिक डायजेशन से उत्पन्न गैस की ऊर्जा का इस्तेमाल कर स्लज की डीवॉटरिंग करना।

उर्वरक का निर्माण

स्लज के उपचार के बाद प्राप्त बायोसॉलिड्स में कार्बन की प्रचुरता और नाईट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम जैसे पोषक तत्वों की मात्रा तय सीमा से कम हो सकती है। यदि इसमें नगरीय निकाय द्वारा नियमित रूप से एकत्रित किये जा रहे कार्बनिक ठोस अपशिष्ट को मिलाया जाए तो इसे एक अच्छे उर्वरक में तब्दील किया जा सकता है। लघु परियोजनाओं में इस तरह के प्रयोग कर के, प्रयोग की सफलता के आधार पर इसके स्वरूप को विस्तार दिया जा सकता है। इस तरह जिस अपशिष्ट का निदान नगरीय निकाय के लिए आर्थिक दायित्व था, वही संसाधन और अवसर में परिवर्तित किया जा सकता है। ऐसा अवसर जिसमें समुचित निर्णय लेने और सही कदम उठाने से पर्यावरण संरक्षण के साथ स्थानीय जनता के लिए रोजगार, सामाजिक उत्थान और व्यवसायिक विकास की संभावना है। सी–गंगा भी इनवायरमेंट

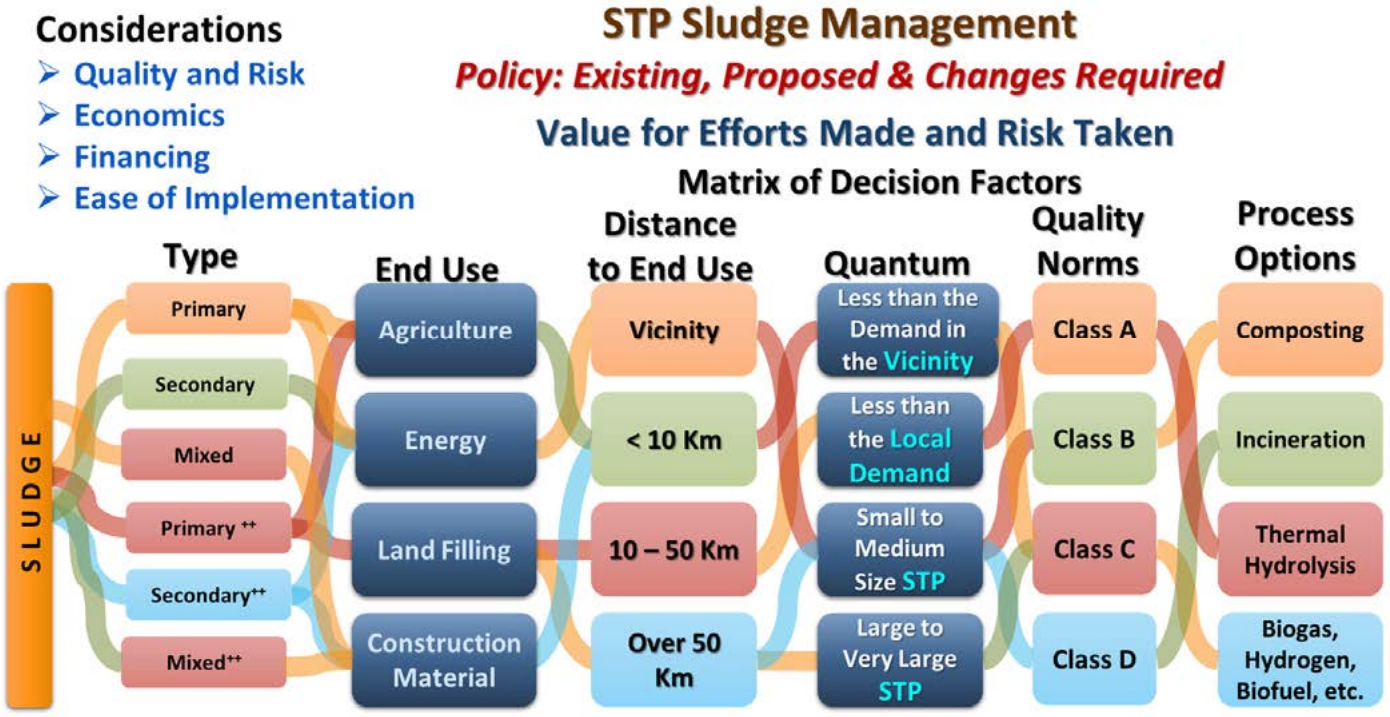

Figure 1: Matrix for management of STP Sludges in India

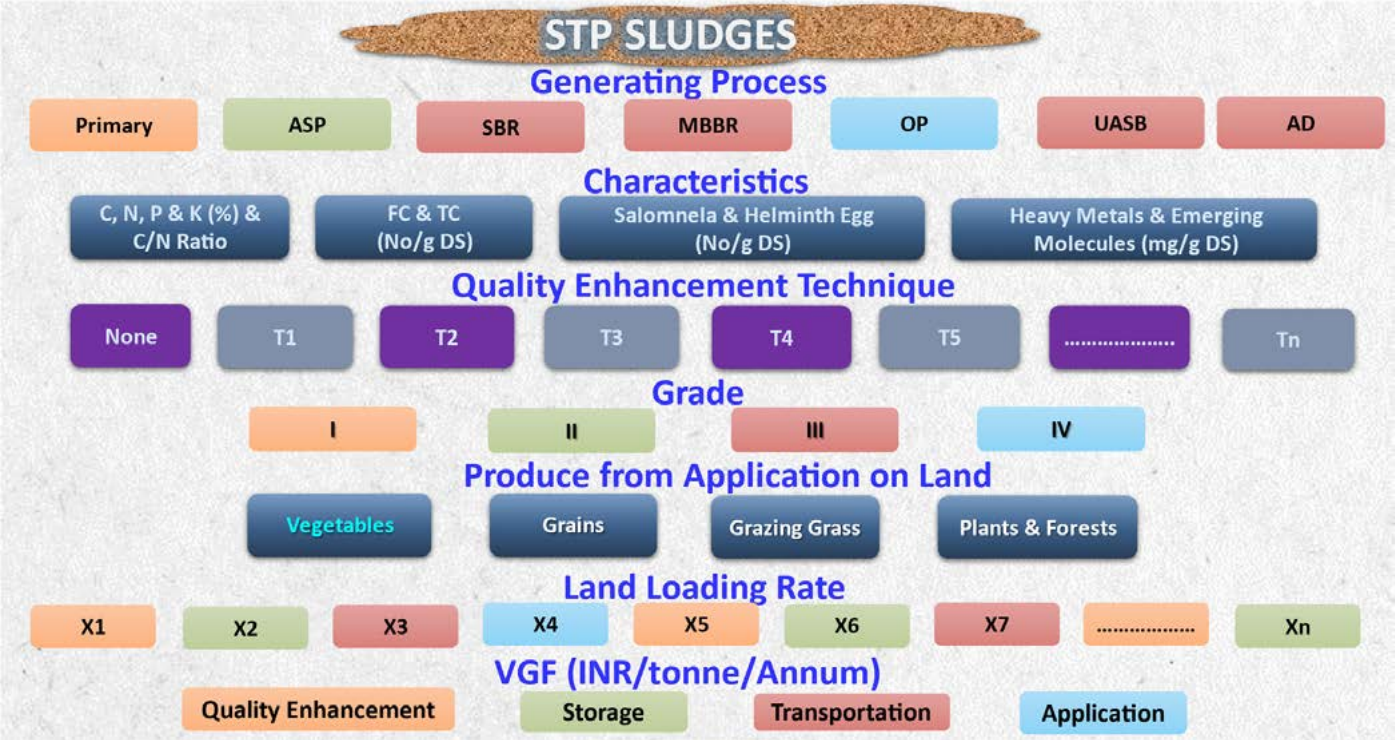

Figure 2: Decision Factors for Using STP Sludges for Soil Conservation

मिशन स्तर पर करना होगा मृदा का संरक्षण

एक तरफ देश की नदियां और भूमि प्रदूषण से जूझ रही है वही दूसरी ओर कृषक समुदाय मिट्टी के कटाव की समस्या को झेल रहा है। अप्रैल 2023 में आईआईटी दिल्ली के शोधार्थियों द्वारा प्रकाशित की गई एक शोध रिपोर्ट के अनुसार देश में मृदा के क्षरण (मिट्टी के कटाव) की दर 20 टन प्रति हेक्टेयर हैं। भारत जहां आज भी अर्थव्यस्था का आधार कृषि हैं, यह अच्छा संकेत नहीं है। इस शोध के प्रकाशित होने से पूर्व सी गंगा सेंटर फॉर गंगा बेसिन मैनेजमेंट एंड स्टडीज और नार्वेयन एजेंसी फॉर डेवलपमेंट कार्पोरेशन द्व ारा किये गए एक अध्ययन में यह सामने आया था कि 5000 मिलियन टन उपजाऊ मृदा की क्षति हमारा देश प्रति वर्ष झेल रहा है। क्षरण होने वाली इस मृदा का तकरीबन एक तिहाई हिस्सा सागर तक पहुंच जाता है। तीव्र गति से हो रहे मृदा क्षरण की वजह से बड़े पैमाने पर उपजाऊ भूमि बंजर भूमि में तब्दील हो रही है। प्राप्त जानकारी के अनुसार ऊपरी मृदा के अपरदन की वजह से करीबन 20 प्रतिशत उपजाऊ भूमि, बंजर भूमि में परिवर्तित हो चुकी है। 300 मिलियन हेक्टेयर उपजाऊ भूमि में से 150 मिलियन हेक्टेयर भूमि की ऊपरी मृदा को संरक्षण के लिए हमारे हस्तक्षेप की जरूरत है। यह समस्या इतनी गंभीर है कि इसके समाधान के लिए मिशन के स्वरूप में योजनाबद्ध और सतत् प्रयास करने होंगे। स्लज ट्रीटमेंट से प्राप्त बायोसॉलिड मृदा के पोषण में वृद्धि करने के साथ मृदा की ऊपरी पर्त के क्षरण से हुई हानि की पूर्ति करने में भी मददगार साबित हो सकते है। इस रिपोर्ट को तैयार करने वाले विशेषज्ञों की सलाह के अनुसार जिन क्षेत्रों में मृदा के क्षरण की दर अधिक है, वहां प्रति हेक्टेयर 10 से 20 टन उपचारित बायोसॉलिड को कृषि भूमि में मिलाया जा सकता है। मृदा में पोषक तत्वों की उपस्थिति के आधार पर 5 से 10 सालों में इस क्रम को दोहराया जा सकता है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए कहा जा सकता है कि ऊपरी मृदा के संरक्षण को राष्ट्रीय प्राथमिकताओं में सम्मिलित कर पूर्ण किया जाना चाहिए। भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान (इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ सॉइल साइंस) के वैज्ञानिक भी कृषि भूमि में सीवेज स्लज के उपचार से उत्पन्न बायोसॉलिड्स का इस्तेमाल करने का समर्थन करते हैं।

टेक्नोलॉजी वैरिफिकेशन कार्यक्रम के तहत इन चुनौतियों के समाधान खोजने वाले विचारों और उन पर आधारित कार्ययोजनाओं को प्रोत्साहित कर रहा है। इस क्षेत्र में तकनीकी और शैक्षणिक सहयोग के लिए नगरीय निकाय सी–गंगा को आवेदन दे सकते है। यही नहीं नमामि गंगे मिशन के अंतर्गत भी इस काम में सहयोग मिलना संभव है।

कितना उचित है स्लज से ऊर्जा उत्पादन?

स्लज ट्रीटमेंट से ऊर्जा उत्पादन की संकल्पना भी कई सार्वजनिक कार्यक्रमों मे रखी जाती है। यह असंभव कार्य नहीं है किंतु यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि स्लज से कितनी मात्रा में ऊर्जा का उत्पादन होगा? ऊर्जा उत्पादन की विधि क्या होगी? इस विधि का पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ेगा? इस संकल्पना पर जो विचार सामने रखे गए, ज्यादातर में बॉयलर में स्लज को भस्म कर के, ऊर्जा के उत्पादन का सिद्धांत प्रस्तुत किया गया। अब हमें यह देखना है कि हमारे देश के लिए क्या आवश्यक है और क्या वाकई में पर्यावरण के लिए हितकारी है? एक ओर भूमि का क्षरण, दूसरी ओर भूमि से घटता कार्बन, उपचारित बॉयोसॉलिड में कार्बन और अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की मौजूदगी को देखते हुए यही उचित होगा कि इस्तेमाल मृदा की ऊपरी पर्त के संरक्षण में किया जाए। ऊर्जा उत्पादन के कई पारंपरिक और नवीनीकृत विकल्प हमारे पास उपलब्ध है, किंतु उपचारित बायोसॉलिड भूमि में कार्बन की पुनर्बहाली का बेहतर विकल्प हो सकता है।

संपर्क
गंगा नदी घाटी प्रबंधन एवं अध्ययन केंद्र (cGanga)
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर 208016, उत्तर प्रदेश, भारत
Email: info@cganga.org, Website: www.cganga.org, Contact us: +91 512 259 7792
©cGanga, 2024